2007:CGHC:11903

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

द्वितीय अपील क्रमांक: 178 / 1999

चतुर सिंह एवं 4 अन्य

विरुध

गयाराम उर्फ़ गेंदूलाल

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

निर्णय हेतु नियत: 12.02.2007

सही/-

दिलीप रावसाहेब देशमुख
न्यायाधीश

2007:CGHC:11903

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

द्वितीय अपील क्रमांक: 178 / 1999

चतुर सिंह एवं 4 अन्य

विरुध

गयाराम उर्फ़ गेंदुलाल

श्री भास्कर प्यासी, अपीलकर्ताओं / प्रतिवादियों के अधिवक्ता

श्री एच.एस. पटेल, उत्तरवादी / वादी के अधिवक्ता

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

निर्णय

(12 फरवरी, 2007 को दिया गया)

इस द्वितीय अपील में, जो असफल प्रतिवादी/अपीलकर्ताओं द्वारा दायर की गई है, निर्धारण हेतु निम्नलिखित महत्वपूर्ण विधि संबंधी प्रश्न उत्पन्न होता है:

"क्या उत्तरदाता क्रमांक 1 इस आधार पर कब्जे की डिक्री का अधिकारी था कि उसने प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से अपना स्वामित्व सिद्ध कर लिया था?"

2. इस अपील में निम्नलिखित तथ्य विवादित नहीं हैं:

2007:CGHC:11903

(अ) दौलत सिंह ग्राम भटगांव, पटवारी हल्का क्रमांक 166, राजस्व वृत्त भटगांव, तहसील बलौदा बाज़ार में स्थित कृषि भूमि, खसरा नंबर 148/2 रकबा 0.26 एकड़, खसरा नंबर 3227/3 रकबा 0.33 एकड़ तथा खसरा नंबर 2590/1 रकबा 0.09 एकड़ (जिसे आगे वाद भूमि कहा जाएगा) के स्वामी थे। दौलत सिंह ने दिनांक 24.07.1960 को रसीद क्रमांक प्रदर्श P-11, दिनांक 04.09.1960 को रसीद क्रमांक प्रदर्श P-12 तथा दिनांक 29.09.1961 को रसीद क्रमांक प्रदर्श P-13 उत्तरदाता क्रमांक 1/वादी गयाराम के पक्ष में निष्पादित की और वाद भूमि का कब्जा गयाराम को सौंप दिया। रसीदें प्रदर्श P-11, P-12 एवं P-13 से यह कहीं भी प्रतीत नहीं होता कि दौलत सिंह ने गयाराम द्वारा दिए गए ऋण के बदले वाद भूमि को बंधक रखने का आशय रखा था। उक्त रसीदें वस्तुतः विक्रय के लिए किए गए करार हैं, जिनके साथ क्रेता अर्थात गयाराम को कब्जा सौंपा गया था।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(ख) वर्ष 1974-75 में गयाराम ने नायब तहसीलदार, बिलाईगढ़ के समक्ष वाद भूमि पर अपने नाम का नामांतरण प्रतिकूल कब्जे के आधार पर कराने हेतु आवेदन प्रस्तुत किया। उक्त कार्यवाही में दौलत सिंह ने शपथपूर्वक कहा कि उन्होंने वाद भूमि को एक नाथू नामक व्यक्ति के पास बंधक रखी थी। नायब तहसीलदार, बिलाईगढ़ ने दिनांक 30.09.1975 के आदेश (प्र.पी.P.5) द्वारा वाद भूमि पर गयाराम के नाम का नामांतरण करने से इंकार किया और गयाराम को अपने स्वामित्व का दावा व्यवहार न्यायालय

2007:CGHC:11903

में स्थापित करने का निर्देश दिया। अपील में, एस.डी.ओ., बलौदा बाज़ार ने नायब तहसीलदार के आदेश को दिनांक 16.05.1978 को पुष्टि करते हुए अपील को आदेश (प्र.पी.P.10) द्वारा खारिज कर दिया।

(ग) गयाराम, उत्तरदाता क्रमांक 1/वादी, ने व्यवहार वाद क्रमांक 26-ए सन् 1979 व्यवहार न्यायाधीश, श्रेणी-2, बलौदा बाज़ार के समक्ष, दौलत सिंह एवं एक पंडुराम के विरुद्ध इस आधार पर दायर किया कि उन्होंने वाद भूमि पर 1960-61 से, जब दौलत सिंह द्वारा विक्रय अनुबंध के तहत उन्हें कब्जा दिया गया था, प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से अपना स्वामित्व सिद्ध कर लिया था। अतः 25.05.1979 को जब दौलत सिंह ने वाद भूमि का पंजीकृत विक्रय विलेख पंडुराम के पक्ष में निष्पादित किया और उन्हें बेदखल किया, उस समय दौलत सिंह का वाद भूमि पर कोई हक या स्वामित्व शेष नहीं था।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(घ) वाद के लंबित रहने के दौरान दिनांक 19.05.1980 को दौलत सिंह का निधन हो गया। उनके विधिक प्रतिनिधि—सुशीला बाई (विधवा), चतुर सिंह (पुत्र) एवं बहारतीन (पुत्री)—को प्रतिवादियों के रूप में अभिलेख पर लाया गया जिनके द्वारा व्यवहार वाद क्र. 26ए/1979 का प्रतिवाद किया गया।

2007:CGHC:11903

(ङ) व्यवहार वाद क्रमांक 26-ए सन् 1979 में दिनांक 13.07.1985 को पारित निर्णय एवं डिक्री के द्वारा, माननीय व्यवहार न्यायाधीश श्रेणी-2, बलौदा बाज़ार ने यह माना कि दस्तावेज़ प्र.पी.P.11, प्र.पी.P.12 एवं प्र.पी.P.13 का उपयोग केवल सहायक उद्देश्य के लिए किया जा सकता है, अर्थात गयाराम को विक्रय अनुबंध के बदले में कब्जा सौंपे जाने के प्रमाण के रूप में। इस प्रकार, गयाराम का कब्जा वाद भूमि पर प्रतिकूल था, जो उन्हें रसीदें प्र.पी.P.11, प्र.पी.P.12 एवं प्र.पी.P.13 के निष्पादन के समय अर्थात वर्ष 1960-61 में दिया गया था और यह मई 1979 तक जारी रहा। अतः गयाराम इस आधार पर वाद भूमि के कब्जे की पुनः प्राप्ति के अधिकारी थे कि उन्होंने प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से अपना स्वामित्व सिद्ध कर लिया था।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(च) उक्त निर्णय एवं डिक्री से आहत होकर, दौलत सिंह के उपरोक्त उल्लेखित विधिक प्रतिनिधियों ने प्रथम अपील क्रमांक 25-ए/1998, 7वें अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, शिविर बलौदा बाज़ार के समक्ष दायर की। प्रथम अपील के लंबित रहने के दौरान, दौलत सिंह की पत्नी सुशीला बाई का निधन हो गया। चूंकि उनके विधिक प्रतिनिधि पहले से ही अभिलेख पर थे, अतः उनका नाम वाद शीर्षक से हटा दिया गया। चतुर सिंह एवं बहारतीन ने पंडुराम के साथ मिलकर प्रथम अपील का प्रतिवाद किया। दिनांक 28 फरवरी 1998 को पारित निर्णय एवं डिक्री द्वारा, प्रथम अपीलीय न्यायालय ने भी

2007:CGHC:11903

अधीनस्त न्यायालय द्वारा दर्ज तथ्यात्मक निष्कर्षों की पुष्टि की और अपील को खारिज कर दिया।

(छ) उक्त निर्णय से आहत होकर, केवल चतुर सिंह एवं पंडुराम ने प्रतिवादी क्रमांक 1/वादी—गयाराम—एवं प्रतिवादी क्र. 2 बहारतीनबाई के विरुद्ध 19.01.1999 को द्वितीय अपील दायर की। प्रतिवादी क्रमांक 2 बहारतीन बाई का 22.12.1998 को, अर्थात द्वितीय अपील दायर किए जाने से काफी पहले, देहांत हो गया था, और वे अपने पीछे दो पुत्रों को छोड़ गईं। द्वितीय अपील दिनांक 01.03.2000 को स्वीकार की गई। दिनांक 21.04.2006 को, प्रतिवादी क्रमांक 1/वादी गयाराम ने न्यायालय को सूचित किया कि बहारतीन बाई का निधन हो चुका है। प्रतिवादी क्रमांक 1/वादी ने दिनांक 29.07.2006 को आवेदन क्रमांक आई.ए. No. 2369/2006 प्रस्तुत कर प्रार्थना की कि चूंकि उत्तरदाता/प्रतिवादी क्रमांक 2 का 22.12.1998 को, अर्थात द्वितीय अपील दायर होने से पहले ही निधन हो चुका था और अपीलकर्ताओं द्वारा उनके विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर लाने के लिए कोई आवेदन प्रस्तुत नहीं किया गया, अतः अपील का पूर्णतः उपशमन हो गया है और इसे खारिज किया जाना चाहिए। दिनांक 10.08.2006 को, अपीलकर्ताओं/प्रतिवादियों द्वारा आवेदन क्रमांक आई.ए. No. 2553/2006 धारा 151 व्यवहार प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत प्रस्तुत किया गया, जिसमें यह प्रार्थना की गई कि बहारतीन बाई—प्रतिवादी क्रमांक 2—का नाम वाद शीर्षक से हटाया जाए क्योंकि उनके

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

2007:CGHC:11903

दो पुत्रों, अर्थात उनके विधिक प्रतिनिधियों , के विरुद्ध कोई कारण वाद शेष नहीं है। अंतिम बहस के दौरान, अपीलकर्ताओं द्वारा दिनांक 30.01.2007 को आवेदन क्रमांक आई.ए. No. 300/2007 धारा 151 व्यवहार प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत भी प्रस्तुत किया गया, जिसमें बहारतीन बाई के विधिक प्रतिनिधियों के नाम प्रतिस्थापित करने हेतु उपयुक्त आवेदन प्रस्तुत करने की अनुमति मांगी गई। दिनांक 21.08.2006 को यह आदेश पारित किया गया कि आवेदन क्रमांक आई.ए. No. 2369/2006 एवं आई.ए. No. 2553/2006 का निराकरण अंतिम निर्णय के समय किया जाएगा।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

3. अब मैं पहले अंतर्वर्ती आवेदन क्रमांक 2553/2006, उत्तरदाता क्र. 2 बहारतीन का नाम वाद शीर्षक से हटाने की अनुमति हेतु, तथा आवेदन क्रमांक 2369/2006, जो कि आदेश 22 नियम 4, व्यवहार प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत प्रतिवादी क्रमांक 1/वादी द्वारा द्वितीय अपील का उपशमन होने के कारण उसे खारिज करने हेतु प्रस्तुत किया गया था, पर विचार करूँगा। अपीलकर्ताओं की ओर से अधिवक्ता श्री भास्कर प्यासी ने यह दलील दी कि आदेश 41 नियम 4, व्यवहार प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत, यदि एक ही आधार पर कई अपीलकर्ता प्रभावित हों, तो उनमें से कोई भी संपूर्ण निर्णय एवं डिक्री को पलटवा सकता है, और इसलिए, मृत बहारतीन बाई के विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर न लाने के कारण, द्वितीय अपील का अपीलकर्ताओं/प्रतिवादियों के विरुद्ध पूर्णतः उपशमन नहीं होगा। श्री भास्कर प्यासी, अपीलकर्ताओं के अधिवक्ता का यह तर्क

2007:CGHC:11903

स्वीकार्य नहीं है। आदेश 41 नियम 4, व्यवहार प्रक्रिया संहिता के प्रावधान, आदेश 22, व्यवहार प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों पर अभिभावी नहीं है। जब किसी अपील का पूर्ण रूप से उपशमन मृत प्रतिवादी/उत्तरदाता के विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर न लाने के कारण हो जाता है, तो इस नियम का सहारा लेकर उस प्रभाव से बचा नहीं जा सकता। आदेश 41 नियम 4 इस धारणा पर आधारित है कि वादीगण या प्रतिवादीगण, जो किसी सामान्य आधार पर डिक्री से प्रभावित हैं, जीवित हैं और उनमें से कोई भी ऐसे संपूर्ण डिक्री के विरुद्ध अपील कर सकता है जिसमें सभी के लिए सामान्य आधार शामिल हो। यह तथ्य कि प्रतिवादी बहारतीन, जो कि मृत थीं, को इस अपील में उत्तरदाता/प्रतिवादी के रूप में शामिल किया गया था, यह दर्शाता है कि अपीलकर्ता/प्रतिवादी चतुर सिंह और बहारतीन के बीच हितों का टकराव था। अतः आदेश 41 नियम 4, व्यवहार प्रक्रिया संहिता का वर्तमान मामले में लागू नहीं होगा।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

4. यह विवादित नहीं है कि व्यवहार वाद के लंबित रहने के दौरान दौलत सिंह का निधन हो गया था और उनके विधिक प्रतिनिधि—सुशीला (पत्नी), चतुर सिंह (पुत्र) और बहारतीन (पुत्री)—को अभिलेख पर लाया गया, जिन्होंने वाद का प्रतिवाद किया। प्रथम अपील के लंबित रहने के दौरान, दौलत सिंह की पत्नी सुशीला का भी निधन हो गया और उनका नाम वाद शीर्षक से हटा दिया गया, क्योंकि उनके विधिक प्रतिनिधि पहले से ही अभिलेख पर थे। इस प्रकार, प्रथम अपील में चतुर सिंह और बहारतीन भी

2007:CGHC:11903

अपीलकर्ता के रूप में वाद का प्रतिवाद कर रहे थे। अभिलेख पर यह तथ्य लाया गया है कि बहारतीन का 22.12.1998 को, अर्थात 29.01.1999 को द्वितीय अपील दायर किए जाने से काफी पहले, निधन हो चुका था। यह तथ्य कि अपीलकर्ताओं ने द्वितीय अपील दायर करते समय बहारतीन (जो पहले ही मृत थीं) को उत्तरदाता के रूप में सम्मिलित किया, यह दर्शाता है कि अपीलकर्ता एवं बहारतीन के विधिक प्रतिनिधियों के बीच हितों का टकराव था। इस दृष्टिकोण से, प्रथम अपील में बहारतीन बाई के विरुद्ध पारित निर्णय एवं डिक्री अंतिम हो चुकी थी। *रामगया प्रसाद गुप्ता एवं अन्य बनाम ब्रह्मदेव प्रसाद गुप्ता एवं अन्य बनाम मुरली प्रसाद एवं अन्य*[1] में यह निर्णय दिया गया कि यदि किसी उत्तरदाता की मृत्यु हो जाए और उसके विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर नहीं लाया जाए, तो अपील का पूर्णतः उपशमन हो जाएगा। उच्चतम न्यायालय ने ऐसे मामलों में यह निर्धारित करने हेतु तीन परीक्षण (टेस्ट) बताए हैं कि क्या अपील का पूर्णतः उपशमन होगा (a) जब अपील में सफलता प्राप्त होने पर न्यायालय ऐसा निर्णय दे सकता है जो अपीलकर्ता और मृत उत्तरदाता के बीच दिए गए निर्णय से टकराव में हो, और इस प्रकार न्यायालय द्वारा ऐसा डिक्री पारित होगा जो समान विषय-वस्तु के संबंध में अपीलकर्ता और मृत उत्तरदाता के बीच अंतिम हो चुके डिक्री के प्रतिकूल होगा। (b) जब अपीलकर्ता केवल उन उत्तरदाताओं के विरुद्ध, जो अब भी

WebCopy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

---

[1]AIR 1972 SC 1181

2007:CGHC:11903

न्यायालय के समक्ष हैं, आवश्यक अनुतोष के लिए वाद दायर नहीं कर सकता था। (c) जब शेष उत्तरदाताओं के विरुद्ध पारित डिक्री, यदि अपील सफल होती है, प्रभावी रूप से निष्पादित नहीं की जा सकती। ये तीनों परीक्षण अनिवार्य रूप से संचयी परीक्षण नहीं हैं। इनमें से यदि कोई एक भी परीक्षण संतुष्ट होता है, तो न्यायालय अपील को खारिज कर सकता है। *सरदार अमरजीत सिंह कालरा बनाम प्रमोद गुप्ता (श्रीमती द्वारा विधिक प्रतिनिधि) एवं अन्य*[2] में भी उच्चतम न्यायालय ने यही सिद्धांत प्रतिपादित किया। न्यायालय ने यह भी कहा कि शेष पक्षकारों के संबंध में पारित निर्णय एवं डिक्री, यदि विरोधाभासी या असंगत डिक्री का रूप लेती है, तो यह भी एक प्रासंगिक परीक्षण है।

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

5. वर्तमान मामले के तथ्यों पर उक्त परीक्षण लागू करने पर तुरंत यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रथम अपील में बहारतीन बाई के विरुद्ध पारित निर्णय एवं डिक्री अंतिम हो चुकी थी। अपीलकर्ता चतुर सिंह और पंडुराम ने बहारतीन बाई को सह-अपीलकर्ता के रूप में नहीं, बल्कि उत्तरदाता के रूप में शामिल किया, जबकि वे जानते थे कि द्वितीय अपील दायर होने से काफी पहले ही उनकी मृत्यु हो चुकी थी। यह दर्शाता है कि बहारतीन बाई के विधिक प्रतिनिधियों और चतुर सिंह के बीच हितों का टकराव था। यह उल्लेखनीय है कि 29.01.1999 को द्वितीय अपील दायर करने के बाद भी, अपीलकर्ताओं

---

[2] (2003) 3 SCC 272

2007:CGHC:11903

ने बहारतीन बाई के विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर लाने का कोई प्रयास नहीं किया, जब तक कि प्रतिवादी क्रमांक 1/वादी ने दिनांक 26.07.2006 को आदेश 22 नियम 4, व्यवहार प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत आवेदन क्रमांक आई.ए. No. 2369/2006 प्रस्तुत कर यह प्रार्थना नहीं की कि चूंकि बहारतीन बाई का निधन 22.12.1998 को हो चुका था और अपीलकर्ताओं ने उनके विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर लाने हेतु समयसीमा के भीतर आवेदन प्रस्तुत नहीं किया, अतः अपील को पूर्णतः खारिज किया जाए। यह भी महत्वपूर्ण है कि अपीलकर्ताओं/प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत प्रत्युत्तर में यह दावा नहीं किया गया कि शेष अपीलकर्ताओं के विरुद्ध वाद का अधिकार जीवित रहा। इस दृष्टिकोण से, प्रकरण की परिस्थितियों में, मेरा विचार है कि चूंकि वर्तमान अपीलकर्ताओं और बहारतीन बाई के बीच हितों का टकराव था, अतः द्वितीय अपील में उनके विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर लाए बिना विरोधाभासी निर्णय एवं डिक्री पारित नहीं की जा सकती थी। अपीलकर्ताओं द्वारा धारा 151, व्यवहार प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत प्रस्तुत आवेदन क्रमांक आई.ए. No. 300/2007 सीधे खारिज किए जाने योग्य है, क्योंकि प्रतिवादियों ने न केवल मृत उत्तरदाता अर्थात बहारतीन बाई के विरुद्ध द्वितीय अपील दायर की, बल्कि इस तथ्य को 6 वर्षों तक छुपाए रखा, और केवल तब, जब प्रतिवादी क्रमांक 1/वादी ने 26.07.2006 को आवेदन प्रस्तुत किया, अपीलकर्ताओं ने धारा 151, व्यवहार प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत आवेदन क्रमांक आई.ए. No. 2553/2006 प्रस्तुत

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

किया, वह भी बिना विलंब क्षमा हेतु परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के अंतर्गत कोई आवेदन प्रस्तुत किए या उपशमन निरस्त करने हेतु कोई आवेदन प्रस्तुत किए बिना। चूंकि अधीनस्थ न्यायालय द्वारा पारित एवं प्रथम अपील में पुष्टि किया गया डिक्री संयुक्त एवं अविभाज्य था और बहारतीन बाई के विरुद्ध अंतिम हो चुका था, अतः उस निर्णय एवं डिक्री को पलटने का डिक्री द्वितीय अपील में तब तक पारित नहीं किया जा सकता था, जब तक बहारतीन के विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर नहीं लाया जाता। अतः यह स्पष्ट है कि मृत उत्तरदाता क्रमांक 2/प्रतिवादी बहारतीन के विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर न लाने के कारण, द्वितीय अपील का पूर्णतः उपशमन हो चुका है और यह खारिज किए जाने योग्य है।

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

6. अब मैं अपील में विरचित विधि संबंधी सारवान प्रश्न पर विचार करूंगा। अपीलकर्ताओं/प्रतिवादियों की ओर से अधिवक्ता श्री भास्कर प्यासी ने अपने इस तर्क के समर्थन में *रूप सिंह बनाम राम सिंह*[3]पर भरोसा किया कि चूंकि प्रतिवादी क्रमांक 1/वादी, गयाराम, यह सिद्ध करने में विफल रहे कि 1960-61 में दौलत सिंह द्वारा वाद भूमि का कब्जा दिए जाने की तिथि से उनका कब्जा शत्रुतापूर्ण मनोभाव के साथ था, अतः दौलत सिंह द्वारा निष्पादित दस्तावेज़ प्र.पी.P.11, प्र.पी.P.12 एवं प्र.पी.P.13 के आधार पर वाद भूमि पर गयाराम का कब्जा केवल अनुमति-आधारित था, जो

[3] AIR 2000 SC 1485

2007:CGHC:11903

वास्तविक स्वामी की जानकारी में शत्रुतापूर्ण मनोभाव सिद्ध हुए बिना प्रतिकूल कब्जे में परिवर्तित नहीं हो सकता था।

7. दूसरी ओर, उत्तरवादी क्रमांक 1/वादी गयाराम की ओर से अधिवक्ता श्री एच.एस. पटेल ने यह तर्क दिया कि चूँकि दौलत सिंह ने विक्रय के अनुबंध के अनुपालन में संपूर्ण विचार राशि प्राप्त करने के बाद 1960-61 में रसीदें (प्र.पी.P.11, प्र.पी.P.12 एवं प्र.पी.P.13) निष्पादित कर गयाराम को वाद भूमि का कब्ज़ा सौंप दिया था, इसलिए गयाराम का कब्ज़ा उसी दिन से प्रतिकूल था जिस दिन उन्हें वाद भूमि का कब्ज़ा दिया गया। चूँकि यह तथ्य सिद्ध नहीं हुआ कि वाद भूमि को दौलत सिंह ने गयाराम के पास बंधक रखा था, और यह निर्विवाद तथ्य था कि 1960-61 से लेकर 25.05.1979 को बेदख़ल किए जाने तक गयाराम वाद भूमि पर शांतिपूर्ण कब्ज़े में थे, अतः अधीनस्थ दोनों न्यायालयों द्वारा यह जो समान तथ्यात्मक निष्कर्ष निकाला गया कि गयाराम ने वाद भूमि पर प्रतिकूल कब्ज़े के माध्यम से अपना स्वामित्व सिद्ध कर लिया था, यह द्वितीय अपील में हस्तक्षेप योग्य नहीं है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

8. प्रतिद्वंद्वी पक्षों की दलीलों पर विचार करने के उपरांत, मैंने सिविल वाद क्रमांक 26-A/1979 एवं सिविल अपील क्रमांक 25-A/1998 में पारित आक्षेपित विवादित निर्णय एवं डिक्री का अत्यधिक सावधानीपूर्वक अवलोकन किया। जहाँ तक यह निष्कर्ष है कि व्यवहार न्यायाधीश वर्ग-2, बलौदाबाज़ार ने सिविल वाद क्रमांक 26-A/1979 में तथा 7वें

2007:CGHC:11903

अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, रायपुर, शिविर बलौदाबाज़ार ने सिविल अपील क्रमांक 25-A/1998 में यह पाया कि दौलत सिंह ने रसीदें (प्र.पी.P.11, प्र.पी.P.12 एवं प्र.पी.P.13) के माध्यम से वाद भूमि गयाराम को बेचने का इरादा किया था और विक्रय अनुबंध के अनुपालन में संपूर्ण विचार राशि प्राप्त कर गयाराम को वाद भूमि का कब्ज़ा सौंप दिया था—तो यह निष्कर्ष, दोनों अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा साक्ष्यों एवं प्रस्तुत सामग्री का यथोचित मूल्यांकन कर निकाला गया तथ्यात्मक निष्कर्ष है, जिस पर द्वितीय अपील में पुनः साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन कर हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए। इस विचार में मुझे उच्चतम न्यायालय के निर्णय से बल मिलता है जो **नवनिथम्मल बनाम अर्जुना चेट्टी**[4] में यह निर्णय दिया गया था कि—

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

"अधीनस्त अदालतों के समान निष्कर्षों में उच्च न्यायालय द्वारा धारा 100 सिविल प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत हस्तक्षेप से बचना चाहिए, जब तक कि कोई अत्यंत आवश्यक और ठोस कारण न हो। किसी भी स्थिति में, केवल अधीनस्त अदालतों के निष्कर्षों को बदलने के लिए साक्ष्यों का पुनर्मूल्यांकन करना उच्च न्यायालय से अपेक्षित नहीं है। वर्तमान मामले में अधीनस्त अपीलीय अदालत ने साक्ष्यों का यथोचित मूल्यांकन किया और इस निष्कर्ष की पुष्टि की कि वाद सीमा से बाधित नहीं था। यहाँ तक कि यदि समान साक्ष्यों का पुनर्मूल्यांकन कर कोई अन्य दृष्टिकोण संभव भी होता, तो भी उच्च न्यायालय को ऐसा नहीं करना चाहिए था, क्योंकि यह नहीं कहा

[4] (1996) 6 SCC 166

2007:CGHC:11903

जा सकता कि प्रथम अपीलीय न्यायालय का दृष्टिकोण किसी भी साक्ष्य के अभाव में था।"

8. व्यवहार न्यायाधीश वर्ग-II, बलौदाबाज़ार द्वारा दिया गया यह निष्कर्ष कि रसीदें (प्र.पी.P.11, प्र.पी.P.12 एवं प्र.पी.P.13) भले ही साक्ष्य के रूप में ग्राह्य न हों, परंतु उन्हें सहायक उद्देश्यों और गयाराम के वाद भूमि पर कब्ज़े की प्रकृति दिखाने हेतु देखा जा सकता है—कानून के अनुरूप है, और यह **बोंदर सिंह एवं अन्य बनाम निहाल सिंह एवं अन्य**[5] में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय से समर्थित है, जिसमें यह कहा गया कि कोई भी बिना स्टाम्प और बिना पंजीकृत दस्तावेज़, भले ही साक्ष्य के रूप में ग्राह्य न हो, परंतु सहायक उद्देश्यों के लिए उसे वादी के वादभूमि पर कब्ज़े की प्रकृति दिखाने हेतु देखा जा सकता है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

9. अतः इस न्यायालय के समक्ष विचारणीय एकमात्र बिंदु यह रह जाता है कि क्या विक्रय अनुबंध के अनुपालन में क्रेता को कब्ज़ा देने के पश्चात उसका कब्ज़ा विक्रेता के प्रति उसी दिन से प्रतिकूल हो जाता है या नहीं।

10. अपीलकर्ताओं के अधिवक्ता ने अपने इस तर्क के समर्थन में **ठाकुर किशन सिंह (मृत) बनाम अरविंद कुमार**[6] पर भरोसा किया कि मात्र कितने भी लंबे समय तक कब्ज़ा बनाए रखने से अनुज्ञेय कब्ज़ा प्रतिकूल कब्ज़े में परिवर्तित नहीं हो जाता। हालाँकि, उक्त

[5] AIR 2003 SC 1905
[6] *(1994)6 SCC 591*

2007:CGHC:11903

मामले में तथ्य यह थे कि अपीलकर्ता ने विवादित भूमि पर उत्तरदाता से ईंट-भट्ठे के संचालन हेतु लाइसेंस प्राप्त कर कब्ज़ा लिया था। अतः यह निर्णय दिया गया कि जब प्रारंभिक कब्ज़ा अनुज्ञेय हो, तो अपीलकर्ता पर यह भारी दायित्व होता है कि वह ठोस और विश्वसनीय साक्ष्यों से यह सिद्ध करे कि उसका कब्ज़ा शत्रुतापूर्ण एवं वास्तविक स्वामी की जानकारी में प्रतिकूल हो गया है। इस प्रकार, उद्धृत मामले के तथ्य वर्तमान मामले से भिन्न हैं और इस पर लागू नहीं होते।

11. उत्तरदाता क्रमांक 1/वादी गयाराम की ओर से अधिवक्ता श्री एच.एस. पटेल ने **रामसिंह पिता रुखडू बनाम रूपसिंह पुत्र देवीसिंह**[7] पर भरोसा किया, जिसमें माननीय न्यायमूर्ति आर.सी. लाहोटी (तत्कालीन) ने यह निर्णय दिया था कि विक्रय अनुबंध के अनुपालन में भूमि पर लिया गया कब्ज़ा अनुबंध की तिथि से ही प्रतिकूल हो जाता है। उन्होंने उच्चतम न्यायालय के एक अप्रकाशित निर्णय **सुंदरसिंह एवं अन्य बनाम नारायणसिंह एवं अन्य** (सिविल अपील क्रमांक 816/1966, निर्णय दिनांक 3 अप्रैल 1969) पर भी भरोसा किया, जिसमें यह सिद्धांत प्रतिपादित किया गया कि जब किसी व्यक्ति को विक्रय अनुबंध के अंतर्गत संपत्ति का कब्ज़ा दिया जाता है, तो यह कहना कि उसका कब्ज़ा अनुज्ञेय है, तब तक सही है जब तक कि वह निश्चित साक्ष्यों द्वारा यह सिद्ध न कर दे कि किस बिंदु से उसका कब्ज़ा मालिको के विरुद्ध प्रतिकूल हो गया की सही क़ानून के रूप में नहीं माना जा सकता।"

[7] *1989 M.P.L.J. 681*

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

2007:CGHC:11903

12. अपीलकर्ताओं/प्रतिवादियों के अधिवक्ता श्री भास्कर प्यासी ने इंगित किया कि उत्तरदाता क्रमांक 1/वादी के अधिवक्ता द्वारा उद्धृत **रामसिंह का मामला** (पूर्वत 5) का निर्णय, **रूप सिंह (द्वारा विधिक प्रतिनिधियों) बनाम राम सिंह (द्वारा विधिक प्रतिनिधियों)**[8]में नामंजूर कर दिया गया था।

13. मैंने उद्धृत मामले का अवलोकन किया, जिसमें प्रतिवादी ने परिसर का कब्ज़ा **बटाईदार** के रूप में, अर्थात किरायेदार के रूप में लिया था, और इसलिए यह निर्णय दिया गया कि उसका कब्ज़ा अनुज्ञेय था तथा यह कब प्रतिकूल और वास्तविक स्वामी के विरुद्ध शत्रुतापूर्ण हो गया, इसका कोई अभिवाई या प्रमाण नहीं था। आगे यह भी निर्णय दिया गया कि यदि प्रतिवादी को विवादित भूमि पर लीज़ी या बटाई समझौते के तहत अनुज्ञेय कब्ज़ा प्राप्त हुआ था, तो उस पर यह दायित्व था कि वह ठोस और विश्वसनीय साक्ष्यों द्वारा शत्रुतापूर्ण कब्ज़े का आशय और वास्तविक स्वामी की जानकारी में प्रतिकूल कब्ज़ा सिद्ध करे, क्योंकि केवल लंबे समय तक कब्ज़ा बनाए रखने से अनुज्ञेय कब्ज़ा प्रतिकूल कब्ज़े में परिवर्तित नहीं हो सकता। वर्तमान मामले में परिस्थितियाँ बिल्कुल भिन्न हैं। दोनों अधीनस्थ न्यायालयों ने प्रासंगिक दस्तावेज़ों और साक्ष्यों का उचित मूल्यांकन करते हुए यह माना कि दौलत सिंह ने 1960-61 में, पूर्ण प्रतिफल प्राप्त करने के बाद, विक्रय अनुबंध के अनुपालन में (जो कि दस्तावेज़ प्र.पी..11, 12 और 13 में निहित है) गयाराम को विवादित भूमि का कब्ज़ा सौंप दिया था। यह विवादित नहीं है कि गयाराम को भूमि पर 1960-61 में कब्ज़ा मिलने के बाद, गयाराम ने 25.05.1979

[8] *(AIR 2000 S.C. 1485)*

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

तक उस भूमि पर कब्ज़ा और आनंद भोग करना जारी रखा, जब दौलत सिंह द्वारा पंडुराम के पक्ष में बिक्री विलेख निष्पादित किए जाने के पश्चात् उसे कब्ज़े से बेदख़ल कर दिया गया। इन 19 वर्षों की लंबी अवधि के दौरान, दौलत सिंह ने किसी भी समय कब्ज़ा पुनः प्राप्त करने का कोई प्रयास नहीं किया और निष्क्रिय बने रहे।

14. अमरेंद्र प्रताप सिंह बनाम तेज बहादुर प्रजापति एवं अन्य[9] में उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि—

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

"क़ानून का उद्देश्य किसी व्यक्ति को, जो अवैध कब्ज़े में है, उसके ग़लत कार्य पर कोई इनाम देना नहीं है; बल्कि यह उस व्यक्ति पर दंड का उच्चारण करता है, जो अपने अधिकार को लागू करने और ग़लत कब्ज़ेदार को हटाने तथा पुनः कब्ज़ा लेने का अधिकार होते हुए भी, 12 वर्षों की अवधि तक ऐसा करने में विफल रहा और निष्क्रिय बना रहा, जिसे क़ानून इस दंड के लिए उचित अवधि मानता है। 12 वर्षों की निष्क्रियता को 'प्रतिकूल कब्ज़े के सिद्धांत' द्वारा इस रूप में माना जाता है कि सही मालिक के पास अपनी स्वामित्व स्थापित करने और कब्ज़ा वापस लेने की इच्छा समाप्त हो चुकी है। संपत्ति का स्वरूप, सही मालिक में निहित स्वामित्व का प्रकार, और वह कब्ज़ा जो प्रतिकूल कब्ज़ेदार कर रहा है—ये सभी प्रासंगिक तत्व हैं, जिन्हें प्रतिकूल कब्ज़े के सिद्धांत के लागू होने में विचार किया जाता है। संपत्ति में अधिकार ऐसा

[9] AIR 2004 SC 3782

2007:CGHC:11903

होना चाहिए जो हस्तांतरणीय हो और जिसे प्रतिस्पर्धी द्वारा प्राप्त किया जा सके। प्रतिकूल कब्ज़ा केवल हस्तांतरणीय अधिकार पर ही लागू होता है। यह अधिकार क़ानून के संचालन से समाप्त हो जाता है, क्योंकि यह स्वेच्छा से हस्तांतरित किया जा सकता था और अब प्रतिकूल कब्ज़े के सिद्धांत द्वारा इसे अनैच्छिक रूप से, सही दावेदार की चूक और निष्क्रियता से, हस्तांतरित माना जाता है; वह दावेदार वास्तविक रूप से या कानूनी रूप से प्रतिस्पर्धी के ग़लत कार्यों को जानता है, फिर भी चुप बैठा रहता है। इस प्रकार की निष्क्रियता या अपनी संपत्ति पर अपने अधिकारों की रक्षा न करना भी अपनी संपत्ति के साथ व्यवहार करने का एक तरीका माना जा सकता है, जो अंततः संपत्ति पर स्वामित्व के समाप्त होने और उस संपत्ति के ग़लत कब्ज़ेदार के पास स्थानांतरित होने का परिणाम देता है।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

15. मेरा यह स्पष्ट मत है कि यदि दौलत सिंह ने, संपूर्ण मूल्य प्राप्त करने के बाद, बिक्री के अनुबंध के अनुपालन में, गया राम को वाद भूमि का कब्ज़ा दे दिया था और उसके बाद गया राम ने 12 वर्ष या उससे अधिक की अवधि तक शांति से, खुले रूप से और बिना किसी व्यवधान के उस भूमि पर कब्ज़ा बनाए रखा, तो बिक्री के अनुबंध के अंतर्गत कब्ज़ा मिलने की तिथि से उसका कब्ज़ा भूमि के स्वामी के विरुद्ध प्रतिकूल कब्ज़ा हो गया। दौलत सिंह की 12 वर्षों तक निष्क्रियता के कारण, गया राम ने वाद भूमि पर अपने स्वामित्व का अधिकार प्रतिकूल कब्ज़े के द्वारा पूर्ण कर लिया। वाद भूमि का पूरा मूल्य दौलत सिंह को अदा करने और उनके द्वारा भूमि का कब्ज़ा दिए जाने के बाद, यह सहज रूप से माना जा सकता है कि

2007:CGHC:11903

गया राम भूमि पर अपने स्वामित्व का दावा कर रहा था और उसने वाद भूमि पर शत्रुतापूर्ण क़ब्ज़ा स्थापित कर लिया था।

16. *वसंतिबेन प्रहलादजी नायक एवं अन्य बनाम सोमनाथ मुलजीभाई नायक एवं अन्य*[10]में यह निर्णय दिया गया कि, प्रतिकूल कब्ज़े के दावे वाले मामलों में **'बेदख़ली'** सिद्ध करने के लिए प्रतिवादी को तीन तत्व साबित करने होते हैं—शत्रुतापूर्ण आशय,लंबा और निर्बाध कब्ज़ा, तथा अनन्य स्वामित्व का खुला प्रयोग, जो मालिक की जानकारी में हो।*कर्नाटक बोर्ड ऑफ वक्फ बनाम भारत सरकार एवं अन्य*[11] में, उच्चतम न्यायालय ने प्रतिकूल कब्ज़े के द्वारा स्वामित्व के अधिकार के अधिग्रहण के प्रमाण से संबंधित कानून को इस प्रकार स्पष्ट किया —

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

"क़ानून की दृष्टि में, जब तक किसी संपत्ति में कोई अतिक्रमण नहीं होता, तब तक उसका स्वामी उस संपत्ति के कब्ज़े में माना जाएगा। स्वामी द्वारा संपत्ति का लंबे समय तक उपयोग न करने से भी उसके स्वामित्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। लेकिन स्थिति तब बदल जाती है जब कोई अन्य व्यक्ति संपत्ति पर कब्ज़ा कर लेता है और उस पर अधिकार का दावा करता है। यह एक शत्रुतापूर्ण कब्ज़ा होता है, जब कोई व्यक्ति स्पष्ट रूप से अपने स्वामित्व का दावा करता है और वास्तविक मालिक के स्वामित्व को अस्वीकार करता है। यह एक स्थापित सिद्धांत है कि जो पक्ष प्रतिकूल क़ब्ज़ा का दावा करता है, उसे यह सिद्ध करना होता है कि

[10] (2004) 3 SCC 376
[11] (2004) 10 SCC 779

2007:CGHC:11903

उसका कब्ज़ा "नेक वी, नेक क्लैम, नेक प्रीकेरियो" रहा है, अर्थात् — न तो बलपूर्वक, न ही छिपकर और न ही अनुमति लेकर, बल्कि शांति से, खुले रूप से और निरंतर। यह कब्ज़ा निरंतरता, सार्वजनिकता और सीमा में इतना पर्याप्त होना चाहिए कि यह दर्शा सके कि उसका कब्ज़ा वास्तविक मालिक के विरुद्ध है। यह कब्ज़ा वास्तविक मालिक के अधिकार से गलत तरीके से बेदख़ली के साथ शुरू होना चाहिए और यह वास्तविक, दृष्टिगोचर, विशिष्ट, शत्रुतापूर्ण और विधिक अवधि तक लगातार रहना चाहिए। विशेष और अनन्य कब्ज़े का भौतिक तथ्य तथा वास्तविक मालिक को बाहर रखते हुए स्वामित्व के इराद — *ये इस प्रकार के मामलों में सबसे महत्वपूर्ण तत्व होते हैं। प्रतिकूल कब्ज़े का दावा केवल कानून का शुद्ध प्रश्न नहीं है, बल्कि यह तथ्य और कानून का मिश्रित प्रश्न है। इसलिए, जो व्यक्ति प्रतिकूल कब्ज़े का दावा करता है, उसे यह सिद्ध करना चाहिए—(a) वह किस तारीख़ को कब्ज़े में आया, (b) उसके कब्ज़े की प्रकृति क्या थी, (c) क्या कब्ज़े का तथ्य दूसरे पक्ष को ज्ञात था, (d) उसका कब्ज़ा कितने समय तक जारी रहा, और (e) उसका कब्ज़ा खुला और बिना किसी व्यवधान के था। प्रतिकूल कब्ज़े का दावा करने वाले व्यक्ति* ***स्वामित्व में हिस्सेदार नहीं होता****, क्योंकि वह वास्तविक मालिक के अधिकारों को समाप्त करने की कोशिश कर रहा है। अतः, उस पर यह दायित्व है कि वह अपने प्रतिकूल कब्ज़े को सिद्ध करने के लिए सभी आवश्यक तथ्यों को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत और स्थापित करे।"*

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

2007:CGHC:11903

17. अपीलकर्ताओं/प्रतिवादियों के अधिवक्ता ने अपने तर्क के समर्थन में **गणेश प्रसाद बनाम नरेंद्रलाल नथूलाल गुप्ता**[12] का हवाला भी दिया, जिसमें कहा गया था कि जब कोई व्यक्ति *भावी क्रेता* के रूप में या बिक्री के अनुबंध के आंशिक निर्वहन में कब्ज़े में आता है, तो ऐसा कब्ज़ा मालिक की अनुमति से या लाइसेंस के अंतर्गत होता है, और यह प्रतिकूल कब्ज़ा नहीं होता और न ही यह स्वामित्व में परिवर्तित हो सकता है। हालाँकि, प्रस्तुत मामला भिन्न है क्योंकि इस मामले में वादी ने वाद भूमि का कब्ज़ा ऋण के बदले प्राप्त किया था, जिसे उसने दिया था, और इसके साथ बिक्री का अनुबंध भी था। इसलिए, यह निर्णय लिया गया कि वादी का कब्ज़ा प्रतिवादी को दिए गए ऋण के बदले में अनुज्ञेय था। वर्तमान मामले में यह सिद्ध नहीं हुआ कि दौलत सिंह ने गयारामसे कोई ऋण लिया था और वाद भूमि को उसके पक्ष में बंधक रखा था। इसके विपरीत, स्पष्ट रूप से यह देखा गया कि दौलत सिंह ने प्रदर्श पी.11, पी.12 और पी.13 के रूप में एक स्पष्ट बिक्री अनुबंध किया था और 1960-61 में गयाराम को वाद भूमि का कब्ज़ा दे दिया था। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, यह नहीं कहा जा सकता कि वाद भूमि पर गयाराम का कब्ज़ा अनुज्ञेय प्रकृति का था।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

18. *बोंदार सिंह* के मामले (पूर्वत 1) के तथ्य वर्तमान मामले से मिलते-जुलते थे। एक बिक्री विलेख दिनांक **09.05.1931**, जो एक फकीरचंद (प्रतिवादियों के पिता) द्वारा टोला सिंह (वादियों के हित के पूर्ववर्ती) के पक्ष में निष्पादित किया गया था, निष्पादन के मामले में विवाद नहीं था। प्रतिरक्षा यह थी कि यह दस्तावेज़ बिना स्टाम्प और अपंजीकृत था और वादियों के पक्ष में भूमि का स्वामित्व हस्तांतरित नहीं करता था। **शीर्ष न्यायालय** ने कहा कि इस दस्तावेज़ को सहायक उद्देश्यों के लिए कि वादियों का वाद भूमि पर कब्ज़ा किस प्रकृति का था देखा जा सकता है। अदालत ने आगे कहा कि बिक्री विलेख से यह स्पष्ट होता है कि

[12] 1992 M.P.L.J. 886

वादियों का प्रारंभिक कब्ज़ा न तो अवैध था और न ही अनधिकृत। इसके अलावा यह भी देखा गया कि **फकीरचंद** ने अपने जीवनकाल में कभी भी वादियों के स्वामित्व या कब्ज़े को बाधित नहीं किया। अभिलेखों में विश्वसनीय साक्ष्य थे, जो यह दिखाते थे कि वादी प्रश्नगत भूमि पर लगातार कब्ज़े में रहे, जब तक कि **16.04.1956** को प्रतिवादियों ने उन्हें यह कहते हुए नोटिस नहीं भेजा कि वादी अतिचारी हैं और भूमि का कब्ज़ा छोड़ दें। इस नोटिस को भी अदालत ने प्रतिवादियों की ओर से यह स्वीकारोक्ति माना कि वादीगण **09.05.1931** से लेकर **16.04.1956** तक वादित भूमि के कब्ज़े में थे। यह भी एक स्वीकार्य तथ्य था कि वादीगण प्रतिवादियों के पिता के जीवनकाल से ही भूमि पर कब्ज़े में थे और उसका खेती कार्य कर रहे थे। यह माना गया कि वादीगण लगातार यह दावा करते रहे कि वे अपने अधिकार से भूमि पर कब्ज़े में हैं। ऐसा कब्ज़ा 25 वर्षों से अधिक समय तक जारी रहा और इस अवधि में वादीगण को वादित भूमि से कभी बेदखल नहीं किया गया। शीर्ष न्यायालय ने आगे यह भी कहा कि वादीगण द्वारा उठाई गई प्रतिकूल कब्ज़े की दलील स्पष्ट रूप से सिद्ध हुई, क्योंकि इसके समर्थन में ठोस और निर्णायक साक्ष्य मौजूद थे, जो यह दर्शाते थे कि वादीगण 09.05.1931 (फकीरचंद द्वारा बिक्री विलेख के निष्पादन की तिथि) से ही वाद भूमि पर निरंतर और बिना बाधा के कब्ज़े में थे।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

19. उपर्युक्त मामले के तथ्य वर्तमान मामले पर पूर्ण रूप से लागू होते हैं। अधीनस्त दोनों अदालतों ने तथ्यों पर समान निष्कर्ष निकाला कि दौलत सिंह ने 1960-61 में प्रदर्श पी.11, पी.12 और पी.13 निष्पादित करने के बाद गयाराम को वाद भूमि का कब्ज़ा दे दिया था, जो मई 1979

तक खुले, अबाधित और शांतिपूर्ण कब्ज़े में रहे, जब उन्हें वास्तव में बेदखल किया गया। इस प्रकार, चूँकि गयाराम ने वाद भूमि का पूरा मूल्य दौलत सिंह को चुका दिया था, भूमि पर स्वामी के रूप में अपने अधिकार का दावा कर रहे थे, और यह स्वीकार किया गया कि वे 12 वर्षों से अधिक समय तक लंबे, निरंतर, खुले और बिना बाधा के कब्ज़े में रहे, अतः उन्होंने वादित भूमि पर प्रतिकूल कब्ज़े द्वारा अपना स्वामित्व सिद्ध कर लिया था।दौलत सिंह द्वारा इस लंबे और निरंतर कब्ज़े को चुनौती न देने की निष्क्रियता यह स्पष्ट रूप से दर्शाती है कि उन्होंने भूमि पर अपने स्वामित्व का दावा करने और कब्ज़ा वापस लेने की इच्छा खो दी थी। इस दृष्टिकोण से, अपीलकर्ताओं/प्रतिवादियों के अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत यह तर्क कि गयाराम का 1960-61 से वादित भूमि पर कब्ज़ा अनुज्ञेय प्रकृति का था, यह तर्क स्वीकार नहीं किया जा सकता।अतः विधि के सारवान प्रश्न उत्तरदाता क्रमांक 1/वादी के पक्ष में सकारात्मक रूप से दिया जाता है कि गयाराम1960-61 में दौलत सिंह द्वारा भूमि का कब्ज़ा दिए जाने की तिथि से लेकर 12 वर्षों से अधिक समय तक वादित भूमि पर लंबे, निरंतर, शांतिपूर्ण और खुले रूप से खेती करने के कब्ज़े में रहा, और इस प्रकार उसने प्रतिकूल कब्ज़े द्वारा वाद भूमि पर अपना स्वामित्व सिद्ध कर लिया। अधीनस्त दोनों अदालतों द्वारा दिया गया निष्कर्ष पूरी तरह उचित है और इसमें किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

2007:CGHC:11903

20. परिणामस्वरूप, द्वितीय अपील खारिज की जाती है। अपीलकर्ताओं को उत्तरदाता क्रमांक 1/वादी के मुक़दमे का व्यय वहन करना होगा। अधिवक्ता शुल्क यदि प्रमाणित किया जाए ₹1,000/- स्वीकृत किया जाता है। तदनुसार डिक्री तैयार की जाए।

हस्ताक्षरित

दिलीप रावसाहब देशमुख
न्यायाधीश

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

Translated By Aman Ansari,Advocate.

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur